

डॉ. मधुकरराव वासनिक ची डब्ल्यू एस एल एवं वाणिज्य महाविद्यालय, नागपूर

बी. ए. अंतिम वर्ष छठवाँ सेमिस्टर

युनिट ३ एवं ४ के पाठ्यक्रम के नोट्स

राजस्व (Public Finance)

## युनिट ४ आन्तरराष्ट्रीय व्यापार

### विदेशी व्यापार की परिभाषा (Introduction to Foreign Trade):

विदेशी व्यापार किसी देश की अर्थव्यवस्था में निर्णायक भूमिका निभाता है। राबर्टसन के अनुसार, "विदेशी व्यापार वृद्धि का इंजन है।" यह देश के प्राकृतिक साधनों के उपयोग और अतिरिक्त उत्पादन के निर्यात में सहायता करता है। इसके अतिरिक्त प्राकृतिक आपदा की स्थिति में विदेशों से तकनीकी ज्ञान का आयात किया जा सकता है।

एक देश बाहर के उन्नत एवं औद्योगिक देशों से आवश्यक पूंजी, मशीनों और कच्चा माल आयात करके देश का औद्योगिकरण कर सकता है। पुनः विदेशी व्यापार द्वारा ही एक देश अपने आर्थिक विकास के लिये विदेशों से आवश्यक सहायता और अन्य साज-सामान प्राप्त कर सकता है। इसी कारण से योजना आयोग ने, पंचवर्षीय योजनाओं में विदेशी व्यापार के विकास को बहुत महत्व दिया है।

### अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार (International Trade):

पिछले 10 सालों से, भारत का व्यवसाय का भारत के वैश्विक निर्यातों और आयातों में हिस्सा 2004 में 0.8 प्रतिशत और 1.0 प्रतिशत से 2013 में 11.7 प्रतिशत और 2.5 प्रतिशत तक सुधरा। प्रमुख निर्यातकों और आयातकों के बीच यह दर्जा 2004 में 30 और 23 से 2013 में 19 और 12 तक सुधरा।

भारत के कुल आयातों में सोने और चाँदी का हिस्सा 2012-13 में 11.4 प्रतिशत और 2013-14 में 7.4 प्रतिशत था। सोना और चाँदी आयात जो 2012-13 और 2013-14 में 9.6 प्रतिशत और 40.4 प्रतिशत गिरे और 2014-15 (अप्रैल-जनवरी) में 8.0 प्रतिशत बड़े।

पूँजी वस्तुओं का आयात 2011 से निरन्तर गिरा। Non-Pol और Non-Gold और चाँदी आयात, जिन्होंने औद्योगिक क्रिया के लिए जरूरी आयातों को प्रभावित किया है, यह 2013-14 और 2013-14 में 0.7 प्रतिशत और 6.9 प्रतिशत की गिरावट के बाद, 2014-15 में बढ़े।

निर्मित वस्तुओं ने हाल ही के वर्षों में निर्यातों (63% तक) को बनाया जिसमें कच्चा और पेट्रोलियम उत्पाद (कोयले के साथ) 20 प्रतिशत तक और कृषि और सहायक उत्पादों में 13.7 प्रतिशत हुए। 2011-12 में US\$ 300 बिलियन को पार करने के बाद, निर्यात की विकास दर में महत्वकारी रूप से कमी होती गई जो वैश्विक व्यापार आयामों के रूप में वैश्विक घटना थी।

पेट्रोलियम और कृषि उत्पादों के निर्यात में विकास जो पिछले चार सालों से सकारात्मक था 2014-15 में नकारात्मक हो गया। कीमती पत्थरों, आभूषण और इलेक्ट्रॉनिक वस्तुओं का निर्यात 2013-13 में घटता गया। यह 2014-14 में घटता गया।

2014-15 के दौरान, कुछ क्षेत्र जैसे यातायात, उपकरण, मशीनरी और संसाधन, धातुओं का निर्माण और रेडीमेड कपड़े निर्यातों में सकारात्मक विकास को दर्ज किया गया। समुद्री उत्पादों और चमड़ा और चमड़े के उत्पादों में 2012-13, 2013-14 और 2014-15 में सापेक्ष रूप से उच्च वृद्धि को दर्ज किया गया

### **भुगतान सन्तुलन (Balance of Payments):**

2011-12 में Current Account Deficit की व्यापकता और 2012-13 में आयातों के स्तर में उठाव आया और इसके वित्तपोषण का बड़े खर्च के रूप में निहितार्थ था क्योंकि निवेश आय अदृश्य खाते में थी। CAD के स्तर का अनुपात में ऐसा खर्च 2007-08 में 28.2 प्रतिशत से 2013-14 में 72.6 प्रतिशत तक बढ़े जो CAD में कमी के लिए महत्वपूर्ण बात थी। CAD का निवेश आय खर्च के द्वारा व्यापक प्रभाव है।

पूंजी बहाव CAD की अत्यधिक वित्तीय जरूरत में थे और जिसके फलस्वरूप विदेशी विनिमय संसाधनों में एक साथ वृद्धि हुई। CAD को 2014-15 में US \$ 17.9 बिलियन को समान अवधि 2013-14 में US \$ 26.9 बिलियन के विरुद्ध रखा गया। कुल विदेशी निवेश और कुल ECD भी सुधरे।

कुल पूंजी बहावों के साथ CAD की अपेक्षा उच्च रहे, भारत के विदेशी विनिमय संसाधनों के लिए US \$ 18.1 बिलियन की। वृद्धि 2014-15 में H1 में थी जो 2013-14 के H1 में US \$ 10.7 बिलियन की गिरावट के विरुद्ध थी।

CAD के साथ प्रमुख मितव्ययताओं के बीच, भारत ब्राजील के बाद दूसरा सबसे बड़ा विदेशी विनिमय संसाधन धारक है। भारत के विदेशी विनिमय संसाधन 2015 में US \$ 330.2 बिलियन है जो मुख्यतः US \$ 305.0 बिलियन रकम के विदेशी पूंजी सम्पत्तियों से बने हैं जो लगभग 92.5 प्रतिशत है।

2014-15 के पहले छः महीने में संसाधनों की बढ़ती के साथ, सभी संसाधन आधारित परम्परागत बाहरी क्षेत्र भेदनीयता सूचकों में सुधार हुआ। उदाहरण के लिए संसाधनों के लिए लघु काल के बाहरी ऋण का अनुपात 2014 में 27.5 प्रतिशत घटा और संसाधन जिन्हें आयात के लिए कवर किया गया वह 8.1 तक बढ़े।

विदेशी संस्थानिक निवेश और FDI का उच्च अंतर्बहाव के कारण इक्विटी और बांड बाजार में रुपये-US डालर विनिमय दर स्थिर थी। यूरोप और जापान में कमजोर अर्थव्यवस्था के कारण, रूपयों को सितम्बर, 2014 से यूरो और येन के विरुद्ध बढ़ावा मिला। रूपये ने दिसम्बर 2014 में 63.75 प्रति US डॉलर को छुआ और इसमें मूल्यहाव हुआ।

### **बाहरी ऋण (External Debt):**

भारत का बाहरी ऋण स्टॉक सितम्बर 2014 के अन्त पर US \$ 455.9 बिलियन तक बढ़ा। बाहरी ऋण में वृद्धि उच्च दीर्घकाल ऋण के कारण हुई थी विशेष रूप से व्यावसायिक उधार और गैर-प्रवासी भारतीय जमा राशियों से। भारत के बाहरी ऋण का परिपक्वता प्रोफाइल दीर्घकाल के उधारों के प्रभुत्व को दर्शाता है।

2014 में, दीर्घ काल के ऋण बढ़े और यह कुल बाहरी ऋण के 81.1% के कारण थे। भारत के बाहरी ऋण प्रबन्धकीय सीमाओं के भीतर थे। यह 2013-14 में 23.5% की GDP अनुपात के बाहरी ऋण को दर्शाते और ऋण सेवा अनुपात के 5.9% को दिखाते। भारत सरकार की प्रूडेंट बाहरी ऋण प्रबन्ध नीति ने आरामदायक बाहरी ऋण स्थिति को बनाने में सहायता की।

# BRICS

ब्रिक्स देश उभरती हुई बाजार अर्थव्यवस्थाओं के नाम से जाने जाते हैं। ब्रिक्स शब्द के गठनकर्ता जिम ओ नील 'गोल्डमैन सैक्स' नामक अंतरराष्ट्रीय कंसल्टेंसी फर्म के मुख्य अर्थशास्त्री थे। वर्ष 2001 में नील ने 'ब्रिक' शब्द को गढ़ते हुए कहा था कि ब्राजील, रूस, भारत और चीन ऐसी उभरती हुई बाजार अर्थव्यवस्थाएं हैं जो अपनी जीडीपी विकास दर, प्रतिव्यक्ति आय, जनसंख्या आधार, विनिर्माण और सेवा क्षेत्र आदि के बल पर वर्ष 2050 तक विकसित देशों की अर्थव्यवस्थाओं को पीछे छोड़ देंगे। वर्ष 2050 आने में देर है, लेकिन नील का यह सपना 15 वर्षों में ही पूरा होता दिख गया।

आज चीन एशिया की सबसे बड़ी और विश्व में अमेरिका के बाद दूसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। साथ ही दुनिया के सबसे बड़े निर्यातक देशों में शामिल है। रूस आज दुनिया की 12वीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। रूस की जीडीपी 1.52 ट्रिलियन डॉलर है, जबकि भारत की जीडीपी विश्व बैंक के नवीनतम आंकड़ों के हिसाब से 2.58 ट्रिलियन डॉलर है। वहीं ब्राजील विश्व की आठवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है जिसका सकल घरेलू उत्पाद 2.05 ट्रिलियन डॉलर है। इसके अलावा 1.53 ट्रिलियन डॉलर जीडीपी के साथ दक्षिण अफ्रीका भी विश्व की ग्यारहवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है। इन आंकड़ों से यह पता चलता है कि इन उभरती हुई बाजार अर्थव्यवस्थाओं में कई बातें एक समान हैं और इन्हें विकसित देशों, विशेषकर अमेरिका जैसे देशों के आर्थिक संरक्षणवादी नीतियों से बचने के लिए एकजुट रहने की जरूरत है।

## 42 प्रतिशत आबादी ब्रिक्स देशों में

ब्रिक्स की महत्ता इस बात से पता चलती है कि दुनिया की 42 प्रतिशत आबादी ब्रिक्स देशों में निवास करती है। वैश्विक जीडीपी में इसका शेयर 23 प्रतिशत है, और नीति आयोग की हालिया रिपोर्ट कहती है कि अगले एक दशक में ब्रिक्स देशों का ग्लोबल जीडीपी में हिस्सा 26 प्रतिशत होगा। इतना ही नहीं, वैश्विक व्यापार में इसकी 17 प्रतिशत हिस्सेदारी है। ब्रिक्स देशों का संयुक्त सकल घरेलू उत्पाद 16 ट्रिलियन डॉलर से अधिक का है। ब्रिक्स का एक बड़ा महत्व उसके न्यू डेवलपमेंट बैंक और उसके द्वारा वित्त पोषित परियोजनाओं से पता चलता है। लगभग 100 बिलियन डॉलर वाले इस बैंक से ब्रिक्स देशों में अवसंरचनात्मक परियोजनाओं और नवीकरणीय ऊर्जा के विकास के लिए वित्तीय सहायता दी जाती है। इस बैंक ने इंटरनेशनल सोलर अलायंस से भी समझौता किया है।

ब्रिक्स के ही बैनर तले 100 बिलियन डॉलर वाले 'कंटिजेंट रिजर्व अरेंजमेंट' के जरिये ब्रिक्स देशों में किसी भी भुगतान संतुलन संकट, तरलता संकट यानी मुद्रास्फीति और अवस्फीति जैसी समस्याओं से निपटने के लिए वित्तीय मदद देने का इंतजाम किया गया है। इसके अलावा ब्रिक्स अपने मीडिया समिट, ट्रेड फेयर, अंडर 17 फुटबॉल टूर्नामेंट जैसी पहलों के जरिये जनता के मध्य संपर्क भी बढ़ाने का काम कर रहा है। कला, संस्कृति, पर्यटन और परिवहन जैसे क्षेत्रों में भी ब्रिक्स के प्रतिनिधि सक्रिय हैं।

## भुगतान सन्तुलन से अभिप्राय (Meaning of Balance of Payments):

भुगतान संतुलन एवं नियत समय में किसी देश द्वारा शेष विश्व से हुए लेन-देन का सुव्यवस्थित विवरण है। एक देश द्वारा राष्ट्रीय सीमाओं से पार किये जाने वाले भुगतान एवं प्राप्तियाँ उस देश के भुगतान सन्तुलन खाते में प्रविष्ट किये जाते हैं।

किसी देश के भुगतान संतुलन की मर्दे सामान्यतः वस्तु व सेवाओं के चालू खाते एवं हस्तान्तरण भुगतान व पूँजी खाते द्वारा प्रदर्शिन होती है। चालू खाते के अधीन वाणिज्यिक वस्तुओं के आयात-निर्यात तथा साधन सेवाओं या अदृश्य मर्दों के लेन-देन सम्मिलित किये जाते है। पूँजी खाते में उल्लिखित प्रविष्टियां ऐसी मर्दों को समाहित करती है जो किन्हीं देशों के निपटानों में शेष विश्व के सापेक्ष होने वाले परिवर्तनों को प्रकट करें।

## **भुगतान सन्तुलन सदैव सन्तुलित रहता है (Balance of Payment Always Balanced):**

भुगतान सन्तुलन का लेखा स्टैंडर्ड बहीखाता पद्धति पर आधारित है जिसके अनुसार प्रत्येक सौदे की दोहरी प्रविष्टि की जाती है तथा अन्तर्राष्ट्रीय भुगतान से सम्बन्धित प्रत्येक सौदे का जमा एवं देय दोनों ओर लिखा जाता है। दोहरी प्रविष्टियों पर आधारित भुगतान सन्तुलन लेखे को देखने से स्पष्ट है कि भुगतान सन्तुलन लेखे में जमा व देय दोनों में पूर्ण सन्तुलन रहने के कारण भुगतान सन्तुलन सदैव सन्तुलित रहता है।

सभी प्रविष्टियाँ ठीक से भरने पर प्रत्येक सौदे की जमा व देय हमेशा बराबर होंगी। इससे अभिप्राय है कि किसी देश की कुल प्राप्तियां आवश्यक रूप से कुल भुगतान के बराबर होती है।

**भुगतान सन्तुलन की मुख्य मर्दों को दो भागों में वर्गीकृत किया जाता है:**

### **(1) भुगतान सन्तुलन का चालू खाता:**

चालू खाते में जमा व देय पक्ष के हस्तान्तरणों या लेन-देन को मुख्यतः दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता:

#### **(i) दृश्य मर्दें:**

जो देश के वस्तु व्यापार अर्थात् वाणिज्यिक व्यापार, यथा खाद्यान्न, कच्चा माल व निर्मित वस्तुओं को समाहित करती है।

#### **(ii) अदृश्य मर्दें:**

जो सेवाएँ यातायात, ब्याज भुगतान, लाभांश, बैंक चार्ज, बीमा भुगतान, रायल्टी, भेंट, सट्टाजनित लाभ व हानि तथा अन्य मर्दों को सम्मिलित करती हैं।

**मुख्यतः चालू खातों में प्रविष्ट मर्दें तीन प्रकार की होती है:**

(a) वस्तुएं (निर्यात व आयत)

(b) सेवाएं

(c) उपहार तथा भेंट।

चालू खाते की इन मर्दों में वस्तुओं का आयात व निर्यात अथवा दृश्य व्यापार सदैव अधिक महत्वपूर्ण होता है। इनमें प्राप्तियों एवं भुगतान के मध्य का अन्तर व्यापार संतुलन कहा जाता है।

### **(2) भुगतान संतुलन का पूँजी खाता:**

पूँजी के हस्तान्तरण या लेन-देन देश की अन्तर्राष्ट्रीय ऋणग्रस्तता की सेवाओं को बाह्य परिसम्पत्तियों व दायित्वों में होने वाले परिवर्तन के द्वारा प्रभावित करते हैं व इसे देश के पूँजी खाते द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। पूँजी खाता ऐसे सभी हस्तान्तरणों को सम्मिलित करता है जो देश की अन्तर्राष्ट्रीय जमा देय दशा में होने वाले परिवर्तनों व इनकी मौद्रिक स्वर्ण जमाओं में होने वाले परिवर्तनों की सूचना देता है।

पूँजी खाते में सामान्यतः उन मदों को सम्मिलित किया जाता है जिसके द्वारा चालू खाते में प्रविष्ट भुगतान सम्भव होते हैं अर्थात् पूँजी खाते में आयात-निर्यात व सेवाओं की प्राप्तियाँ व भुगतान की मदें सम्मिलित होती है। इनमें मुख्यतः (i) स्वर्ण का हस्तान्तरण (ii) निजी खातों का शेष भुगतान, (iii) अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं से सम्बद्ध भुगतान एवं प्राप्तियाँ तथा सरकारी खातों का शेष भुगतान सम्मिलित होता है।

इस अर्थ में कि सभी भुगतान व प्राप्तियाँ समान रहें, भुगतान सन्तुलन में सदैव साम्यता विद्यमान होती है। दूसरे शब्दों में एक देश के सब जमा मिल कर उसके देय के बराबर होने चाहिएँ। इस प्रकार भुगतान सन्तुलन सम्बन्धी विवरण के समस्त धनात्मक (+) एवं ऋणात्मक (-) चिन्ह एक-दूसरे को बराबर करते हैं व उनका आपसी प्रभाव शून्य होता है।

#### **4. भुगतान सन्तुलन में घाटा एवं अतिरेक (Deficit and Surplus in Balance of Payments):**

भुगतान सन्तुलन में घाटे एवं अतिरेक का विचार नया नहीं है यद्यपि इसकी महत्ता को हाल के ही वर्षों में स्वीकार किया गया है। एक लम्बे समय तक चालू खाते पर सन्तुलन को अतिरेक या घाटे का आधार बनाया गया है।

भुगतान सन्तुलन में घाटे अथवा अतिरेक हेतु भुगतान सन्तुलन के विशिष्ट वर्ग या खाते के वर्गीकरण को ध्यान में रखा जाता है। उदाहरण हेतु हम तालिका 50.1 की सहायता लेते हैं। भुगतान सन्तुलन में अतिरेक तब होगा जब वाणिज्यिक निर्यातों की वाणिज्यिक आयातों पर अधिकता होगी।

यदि आयात अधिक व निर्यात कम है तो भुगतान सन्तुलन ऋणात्मक (-) होगा (तालिका में मद-1) चालू खाते के अतिरेक का घाटा वाणिज्यिक एवं सेवाओं के निर्यातों व आयातों की प्राप्तियों एवं भुगतानों के अन्तर द्वारा मापा जायेगा। (देखें मद 1 से 5)

एक पक्षीय हस्तान्तरणों में निजी व सरकारी हस्तान्तरण (मद 6 व 7) तथा राष्ट्र के दीर्घकालीन विदेशी विनियोग (मद 8) में प्रत्यक्ष व पोर्टफोलियो विनियोग सम्मिलित किए जाते हैं।

सन्तुलनकारी मद के अधीन अल्पकालीन सरकारी पूँजी (मद 9) व स्वर्ण तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय कोषों की गतियों (मद 10) को शामिल किया जाता है। याद सरकारी अल्पकालीन पूँजी, स्वर्ण व अन्तर्राष्ट्रीय कोषों में कोई शुद्ध प्रवाह नहीं होता तो सन्तुलनकारी मदों का योग शून्य होगा।

यह तब सम्भव होगा जब कुल देय व जमा (मद 1 से 8) एक-दूसरे के बराबर होंगे। इन्हें हम रेखा से ऊपर कहते हैं। यदि इस रेखा से ऊपर देय व जमा बराबर नहीं है तो सन्तुलन धनात्मक (+) या ऋणात्मक (-) होगा अथवा भुगतान सन्तुलन अतिरेक या घाटे की स्थिति में होता है।

हस्तान्तरणों की प्रवृत्ति को स्वायत्त तथा समायोजक के रूप में भी स्पष्ट किया जाता है। हस्तान्तरण स्वायत्त तब होगा जब वह वाणिज्यिक प्रेरणा या राजनीतिक विचार विमर्श के प्रत्युत्तर में हो एवं इन्हें भुगतान सन्तुलन में स्वतन्त्र रूप से सम्मिलित किया गया हो। (तालिका में 1 से 8 की मदें स्वायत्त कही जाती हैं)

समायोजक हस्तान्तरण वह है जो कुल स्वायत्त जमा व देय के अन्तर को पूरा करने के लिए किये जाते हैं। इस प्रकार अन्तराल को पाटने के लिए देश के विदेशी विनिमय अधिकारी द्वारा किए गए हस्तान्तरण (मद 9 व 10) समायोजक प्रकृति के होते हैं।

#### **भुगतान सन्तुलन में असाम्य (Disequilibrium in Balance of Payments):**

कुल प्राप्तियों एवं कुल देयों के मध्य होने वाले अनिवार्य सन्तुलन का कोई विश्लेषणात्मक महत्व है। महत्व तो इस बात का है कि सन्तुलन कैसे प्राप्त होता है? यदि प्राप्ति और देय के मध्य सन्तुलन रखने के लिए विशाल मात्रा में स्वर्ण का आवागमन हो या विदेश में देश के सचित कीवों की मात्राओं

का आहरण करना पड़े या फिर विदेशों व अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं से अल्पकालीन या दीर्घकालीन ऋण लेने पड़ें तो सन्तुलन भ्रामक है। ऐसी परिस्थिति यह बतलाती है कि देश की अर्थव्यवस्था में कोई असमायोजना विद्यमान है।

**भुगतान सन्तुलन के असाम्य को मुख्य तीन भागों में बाँटा जाता है:**

- (1) चक्रीय असन्तुलन
- (2) चिरकालिक असन्तुलन
- (3) संरचनात्मक असन्तुलन

**(1) चक्रीय असन्तुलन:**

चक्रीय असन्तुलन व्यापार चक्रों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होता है। आय व उत्पादन में वृद्धि की दीर्घकालीन प्रवृत्तियाँ यह स्पष्ट करती हैं कि इनके अधीन अल्पकालीन तेजी व मन्दी की दशाएँ विद्यमान होती हैं।

**निम्न में से कोई दशा विद्यमान होने पर व्यापार चक्र चक्रीय असन्तुलन को जन्म दे सकता है:**

- (I) विभिन्न देशों में तेजी व मन्दी की दशाएँ भिन्न-भिन्न होती है।
- (II) विभिन्न देशों में तेजी व मन्दी के समयों में अन्तर होता है।
- (III) विभिन्न देशों में आयातों की माँग की आय लोच भिन्न-भिन्न होती है।

चक्रीय असन्तुलन की मुख्य विशेषता यह होती है कि सम्पूर्ण व्यापार चक्र के अधीन भुगतान सन्तुलन साम्य में होता है। उदाहरणार्थ अन्य बातों के समान रहने पर, यदि A देश में B देश से गहन व्यापार चक्र हो तो A देश तेजी के काल में घाटा व मन्दी की अवधि में अतिरिक्त प्राप्त करेगा।

B देश में इससे ठीक विपरीत दशा होगी। तेजी के समय A देश में B देश की तुलना में आय तेजी से बढ़ेगी। चूँकि A देश में आय तेजी से बढ़ती है अतः A देश के आयातों में तीव्र वृद्धि होगी। B देश में होने वाली आय की वृद्धि कम है अतः B देश के आयात भी सापेक्षिक रूप से धीमी गति से बढ़ेंगे।

मन्दी के काल में A देश में (B देश से) अधिक तेजी से आय गिरना आरम्भ होगी। अतः A देश के आयातों में (B देश की तुलना में) तेजी से कमी होगी। भुगतान सन्तुलन में चक्रीय असाम्य तब भी उत्पन्न होगा जब विभिन्न देशों में विभिन्न समयों पर व्यापार चक्र की विविध गतियाँ हो रही हों।

अन्य बातों के समान रहने पर यदि व्यापार चक्र की गतियाँ B देश में A देश से एक वर्ष बाद आ रही हों तो A देश तेजी के समय घाटे की। मन्दी के समय अतिरिक्त की स्थितियों को प्राप्त करेगा। B देश में A देश की विपरीत दशा देखी जाएगी।

भुगतान सन्तुलन में चक्रीय असाध्य तब भी उत्पन्न होता है जब आयातों की माँग की आय लोच में भिन्नता देखी जाए। अन्य बातों के समान रहने पर यदि A देश में आयातों की माँग की आय लोच B देश से अधिक हो तो A देश में तेजी के समय घाटे व मन्दी के समय अतिरिक्त की स्थितियाँ देखी जाएँगी।

आयातों की माँग की आय लोच उच्च होने के कारण तेजी और मन्दी के समय आयातों में होने वाली वृद्धि व कमी, B देश की तुलना में A देश में अधिक दिखाई देगी।

चक्र्रीय असाम्य तब भी उत्पन्न होता है जब विभिन्न देशों में आयातों की माँग की कीमत लोच में भिन्नता दिखाई दे। सामान्यतः तेजी के समय कीमतें बढ़ेगी, मन्दी के समय कीमतें घटेंगी। अन्य बातों के अलावा यदि आयातों के लिए माँग की आय लोच A देश में B देश से अधिक हो तो A देश तेजी के समय अतिरेक तथा मन्दी के समय घाटे का अनुभव करेगा।

यह भी ध्यान में रखना आवश्यक है कि केवल उपर्युक्त स्थितियाँ भुगतान सन्तुलन में असाम्य का कारण नहीं बनती। ऐसी कुछ अन्य दशाएँ भी उत्पन्न हो सकती हैं जो भुगतान सन्तुलन में चक्र्रीय असमम्या उत्पन्न करती हैं; जैसे निर्यातों की माँग में होने वाले उच्चावचन, उत्पादन की लोच में पाई जाने स भिन्नताएँ एवं विभिन्न देशों की कीमतों में होने वाले परिवर्तन इत्यादि।

## (2) चिरकालिक संतुलन:

भुगतान संतुलन में चिरकालिक संतुलन तब उत्पन्न होता है जब अर्थव्यवस्था विकास की एक अवस्था से दूसरी अवस्था में प्रवेश करती है। इस प्रक्रिया में कई घटकों, जैसे पूंजी निर्माण, जनसंख्या की वृद्धि, तकनीकी परिवर्तन, बाजारों का विकास, संसाधनों की मात्रा में परिवर्तन होते हैं।

विकास की प्रारम्भिक अवस्था में जब अर्थव्यवस्था तीव्र गति से वृद्धि को बढ़ाना चाहती है तब उसे उत्पादन में वृद्धि हेतु घरेलू रूप से संग्रहित बचतों से कहीं अधिक मात्रा में विनियोग की आवश्यकता होती है विकास की इस अवस्था में आयातों की प्रवृत्ति निर्यातों से अधिक रहने की होती है। यदि किसी देश में विदेशी पूंजी का पर्याप्त अर्न्तप्रवाह नहीं हो पा रहा हो तो देश चिरकालिक असन्तुलन का सामना करेगा।

दूसरी तरफ एक ऐसा देश जहाँ विकास की दर सापेक्षिक रूप से उच्च हो तो वह देश पर्याप्त मात्रा में बचतों को संग्रहित कर सकता है जिनका समुचित विनियोग किया जाना सम्भव है।

चूंकि उत्पादकता में वृद्धि हेतु विनियोग की पर्याप्त मात्रा देश में उपलब्ध है अतः उत्पादकता के बढ़ने से निर्यातों में भी वृद्धि होगी। इस प्रकार भुगतान सन्तुलन में साम्यावस्था की प्राप्ति तब होगी जब निर्यातों से अधिक आयात न हो तथा देश में विदेशी ऋणों का अर्न्तप्रवाह न हो।

सामान्यतः चिरकालिक भुगतान असन्तुलन की व्याख्या देश में बचत व विनियोग की स्थिति के कारण स्पष्ट की जा सकती है। दूसरा महत्वपूर्ण घटक जनसंख्या है। अन्य बातों के समान रहने पर, चिरकालिक भुगतान असन्तुलन जनसंख्या में वृद्धि के कारण भी उत्पन्न होता है।

देश में जनवृद्धि से आन्तरिक उत्पादन बढ़ता है जिससे आयात माँग बढ़ सकती है तथा निर्यात का कुछ अंश घरेलू उपभोग माँग से प्रभावित हो सकता है जिससे चिरकालिक असन्तुलन उत्पन्न होता है।

देश में वृद्धि दर बढ़ाने हेतु जब औद्योगिक क्षेत्र में तीव्र विनियोग किया जाता है तब भी चिरकालिक असन्तुलन उत्पन्न होता है। उत्पादन में वृद्धि की नई तकनीकों की खोज से उत्पादन लागत कम होती है।

## (3) संरचनात्मक असन्तुलन:

भुगतान सन्तुलन में संरचनात्मक असन्तुलन तब उत्पन्न होता है जब निर्यातों व आयातों की माँग व पूर्ति दशाओं में संरचनात्मक परिवर्तन है। उदाहरणार्थ हम ऐसी दशाओं को ध्यान में रखते हैं जिनसे संरचनात्मक असन्तुलन उत्पन्न होते हैं।

माना किसी देश में निर्यातों की विदेशी माँग में परिवर्तन होता है। यदि A देश की X वस्तु की माँग, विदेशी माँग, रुचि एवं आस्वादों में परिवर्तन के कारण कम हो जाती है तो X वस्तु के उत्पादन में लगे साधन ऐसी किसी दूसरी वस्तु के उत्पादन की ओर लगाए जाएँगे जिसकी विदेशों में माँग की जा रही हो।

यदि A देश के लिए यह सम्भव न हो कि वह अधिक माँग वाली वस्तु की ओर साधनों का प्रवाह न कर पाए तो A देश संरचनात्मक असन्तुलन की स्थिति का अनुभव करेगा। यह स्थिति तब भी उत्पन्न हो सकती है जब रुचि, फैशन तकनीक आदि में परिवर्तन हो रहा हो।

संरचनात्मक असंतुलन तब भी उत्पन्न हो सकता है जब पूर्ति में परिवर्तन हो। यदि किसी देश में मानसून ठीक समय पर न आने से फसल बेकार हो जाए एवं यदि वह देश उस फसल का निर्यात करता आ रहा हो तो इससे निर्यात प्रभावित होंगे। यह भी सम्भव है कि देश की आवश्यकता के अनुरूप खाद्यान्न का आयात करना पड़े।

यदि देश में औद्योगिक अशान्ति, अनशन, हिंसा से औद्योगिक उत्पादन प्रभावित हो व निर्यात कम हो जाएँ तो यह स्थितियाँ भी संरचनात्मक असंतुलन को जन्म देती हैं। संरचनात्मक असंतुलन तब भी उत्पन्न हो सकता है जब विदेशों से प्राप्त सेवा आय में कमी हो।

## 6. भुगतान सन्तुलन समायोजन (Adjustment of Balance of Payment):

परम्परागत विश्लेषण के आधार पर समायोजन के प्रति उत्तरदायी शक्तियाँ कीमत समता प्रवाह प्रक्रिया द्वारा संचालित होती है। स्वर्णमान के अधीन स्थिर विनिमय दर प्रणाली पर आधारित विवेचन भुगतान सन्तुलन के घाटे व अतिरेक को स्वर्ण के अप्रवाह व बहिर्प्रवाह की स्वचालकता द्वारा समायोजित करता है।

भुगतान सन्तुलन में घाटा अनुभव कर रहे देश द्वारा स्वर्ण का बहिर्प्रवाह होने पर मौद्रिक पूर्ति संकुचित होती है व कीमत गिरती है। इससे देश के निर्यातों में वृद्धि व आयातों में कमी होती है।

स्थिर विनिमय दरों पर आश्रित रहते हुए समायोजन की प्रक्रिया स्वचालित रूप से कार्य करती है। जबकि यह संकल्पना ली जाए कि घाटा व अतिरेक प्राप्त कर रहे देश की कीमतों में दृढ़ता नहीं होगी। कीमत परिवर्तनीयता पर आधारित यह सिद्धान्त परम्परागत मौद्रिक विश्लेषण पर आधारित है।

आधुनिक विश्लेषण में विदेशी व्यापार गुणक द्वारा सन्तुलन दशा को स्पष्ट किया जाता है। निर्यात गुणांक के कार्यशील होने पर निर्यातों व घरेलू आय में वृद्धि होती है। घरेलू आय बढ़ने से आयात बढ़ते हैं। यदि आयात, निर्यातों से अधिक है तो घरेलू आय का स्तर नीचा रहेगा। इस प्रकार आय में होने वाले परिवर्तनों से समायोजन सम्भव होगा।

विनिमय दर में परिवर्तन करेन्सी के अवमूल्यन या अधिमूल्यन को प्रकट करता है। अवमूल्यन भुगतान सन्तुलन में समायोजन करने में समर्थ तब होगा जब आयातों की घरेलू एवं विदेशी माँग की लोच इकाई से अधिक हो। यह तब सम्भव है जब पूर्ति पूर्णतया लोचदार हो तथा व्यापार प्रारम्भ में सन्तुलित हो।

परन्तु जब लोच वांछित स्तर से कम हो तब भुगतान सन्तुलन समायोजन हेतु अवमूल्यन व लोच दशाओं की सार्थकता संदिग्ध बन जाती है। विनिमय दर के परिवर्तन द्वारा भुगतान सन्तुलन समायोजन में यदि घाटे वाले देश की वास्तविक समस्या आय के ऊपर व्यय की अधिकता हो तो ऐसी नीतियों को चुनना आवश्यक होगा जिससे आय के सापेक्ष व्यय कम किए जा सकें। ऐसी स्थिति में मौद्रिक व राजकोषीय नीति का आश्रय लिया जा सकता है।

मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों का ऐसा उचित संयोग जिससे बाह्य सन्तुलन प्राप्त हो सके उन दशाओं में सम्भव है जब विनिमय दर स्थायित्व लिए हो व विशेष परिस्थिति में ही विनिमय दर में परिवर्तन संभव हो। विनिमय दर में स्थायित्व लाने की भूमिका अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा सम्पन्न की जाती है।

**विभिन्न विनिमय दर प्रणालियों द्वारा स्वतन्त्र रूप से उच्चावचन करती विनिमय दर, स्वर्णमान एवं अधिकीलित विनिमय दर के अधीन भुगतान सन्तुलन समायोजन की व्याख्या निम्न है:**

### (i) स्वतंत्र रूप से उच्चावचन करती विनिमय दरों के अधीन भुगतान सन्तुलन समायोजन:

स्वतन्त्र रूप से गति करती विनिमय दरों के अधीन भुगतान सन्तुलन समायोजन निर्यात, आयात एवं अल्पकालीन पूँजीगतियों में होने वाले परिवर्तनों द्वारा सम्भव होता है। व्यापार की मात्रा में होने वाले परिवर्तन निर्यात व आयात की घरेलू एवं विदेशी माँग व पूर्ति की लोच पर निर्भर करते हैं।

अल्पकालीन पूँजीगति मुख्यतः ब्याज अर्न्तपणन, सट्टा एवं वाणिज्यिक व्यापार की मात्रा से प्रभावित होती है। समायोजन की प्रक्रिया स्वचालित रूप से विनिमय दर में होने वाले उच्चावचन के परिणामस्वरूप सापेक्षिक कीमतों में होने वाले परिवर्तन के प्रत्युत्तर में निर्यात व आयात की मात्रा को प्रभावित करते हैं। संक्षेप में समायोजन की प्रक्रिया अल्पकालीन पूँजीगतियों के साथ व्यापार सन्तुलन के परिवर्तनों द्वारा संचालित होती है।



स्वरूप रूप से उच्चावचन करती विनिमय दर प्रणाली की क्रियाशीलता यूरोप में 1919 से 1926 तक संदिग्ध मानी गई। यह साख विस्तार पर रोक लगाने में असमर्थ रहने के कारण असफल सिद्ध हुई। अधिकांश सरकारों का दृष्टिकोण इस प्रणाली के प्रतिकूल रहा।

### (ii) स्वर्णमान के अन्तर्गत भुगतान सन्तुलन समायोजन:

स्वर्णमान के अन्तर्गत विनिमय दरें व्यक्तिगत देशों की करेन्सियों की स्वर्ण के रूप में परिभाषित टक समता हो पाती, क्योंकि स्वर्ण के क्रय-विक्रय की हस्तान्तरण लागतों को ध्यान में रखना आवश्यक होता है।

विनिमय दरें स्वर्ण निर्यात बिन्दु तथा स्वर्ण आयात बिन्दु पर नियमित रहती हैं एवं इन दोनों के मध्य की संकुचित सीमा के मध्य उच्चावचन करती हैं समायोजन की प्रक्रिया में यह माना जाता है कि मजदूरी कीमतें व ब्याज की दर मौद्रिक परिवर्तनों का प्रत्युत्तर देती हैं।

जिससे व्यापार सन्तुलन पर प्रभाव पड़ता है। अन्तर्राष्ट्रीय अल्पकालीन पूंजी के प्रवाह तब तक परिवर्तित होंगे जब तक स्वर्ण के प्रवाह रुक न जाएँ व भुगतान सन्तुलन समायोजित न हो जाए।

### (iii) अधिकीलित विनिमय दरों के अन्तर्गत भुगतान संतुलन समायोजन:

वर्तमान की अधिकीलित या नियंत्रित किन्तु समायोजित विनिमय दरें स्वतन्त्र रूप से उच्चावचन करती विनिमय दरों की लोचशील प्रवृत्ति तथा स्वर्णमान प्रणाली की मुख्य विशेषता स्वचालित समायोजन को समन्वित करती हैं।

समायोजन की स्वचालकता को भुगतान सन्तुलन से हानि अथवा लाभ प्राप्त कर रहे देशों में अन्तर्राष्ट्रीय कोषों में होने वाले परिवर्तन के प्रत्युत्तर द्वारा मौद्रिक आय व ब्याज की दर में होने वाले परिवर्तन द्वारा प्राप्त किया जाता है।

विनिमय दरें सापेक्षिक रूप से सीमित सीमाओं पर आधारित अधिकीलित होती हैं ताकि विनिमय दर की अनिश्चितता की दशा में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार व पूँजीगत प्रवाहों की अवरुद्धता को न्यूनतम किया जा सके।

जब किसी देश के भुगतान सन्तुलन में किसी संरचनात्मक परिवर्तन के कारण आधारभूत असन्तुलन की दशा उत्पन्न हो रही हो तो समायोजन हेतु विनिमय दरों में अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के परामर्श द्वारा परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाता है।

## 7. आधारभूत असन्तुलन को सुधारने हेतु विनिमय दर समायोजन (Exchange Rate Adjustment to Correct a Fundamental Disequilibrium):

भुगतान सन्तुलन में असाम्य की प्रवृत्ति मुख्यतः निम्न प्रकार की होती है:

- (1) चक्रीय असन्तुलन- जो व्यापार चक्रों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होता है।
- (2) चिरकालिक असन्तुलन- जब देश विकास की एक अवस्था से दूसरी अवस्था में प्रवेश कर रहा हो। इस प्रक्रिया में जनसंख्या में होने वाली वृद्धि, बाजार के विस्तार, साधनों की मात्रा में परिवर्तन, तकनीकी सुधार व नवप्रवर्तन की क्रिया एवं पूँजी निर्माण की स्थितियाँ परिवर्तित होती हैं।
- (3) संरचनात्मक असन्तुलन- जोकि निर्यात अथवा आयात या दोनों की माँग व पूर्ति में होने वाले परिवर्तन से प्रभावित होता है।
- (4) अस्थायी असन्तुलन- अल्पकालीन प्रवृत्तियों, यथा बाढ़, सूखा, अकाल, महामारी, युद्ध से उत्पादन होता है।
- (5) स्थायी असन्तुलन- इसकी प्रकृति दीर्घकालीन होती है। यदि असन्तुलन के कारणों को दीर्घकाल में परिवर्तित न किया जा सके तो इसे आधारभूत असन्तुलन कहा जाता है।

यदि असाध्यावस्था क्षणिक या चक्रीय है तो इससे अभिप्राय है कि असन्तुलन को उत्पन्न करने वाली घटनाएँ या तो पुनः उत्पन्न नहीं होंगी या वह स्वयं में प्रतिगामी शक्तियों से सम्बन्धित होंगी। इन परिस्थितियों में भुगतान सन्तुलन में घाटा या अतिरिक्त उत्पन्न कर रहा देश अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक कोषों को बफर के रूप में प्रयोग करेगा।

यदि देश के पास पर्याप्त मात्रा में कोष संग्रहित नहीं हैं तो अन्य विकल्प, जैसे आयात संरक्षण या घरेलू अवस्फीति की नीति को अपनाया जाएगा। सम्भव है कि विकल्प के रूप में वह देश अवमूल्यन की नीति को भी अपनाए।

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष भुगतान सन्तुलन के असाम्य की अल्पकालिक या अस्थायी कठिनाइयों के निवारण हेतु अतिरिक्त कोष सुलभ करता है व इन देशों को अत्यधिक कटु नीतियों के विकल्प प्रदान करता है। कोष की प्रणाली के अधीन अवमूल्यन की नीति को भुगतान सन्तुलन के आधारभूत सन्तुलन को दूर करने के उपाय के रूप में व्याख्यायित किया जाता है।

**अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा स्पष्ट किया गया है कि:**

- (i) एक सामान्य देश अपनी करेन्सी के समता मूल्य में परिवर्तन को तब प्रस्तावित करेगा जब वह आधारभूत असन्तुलन को सुधारना चाहता है।
- (ii) सदस्य देश की करेन्सी के समता मूल्य में परिवर्तन किया जाना तब सम्भव होगा जब भुगतान सन्तुलन के असाम्य को वहन कर रहा देश करेन्सी के समता मूल्य में परिवर्तन को प्रस्तावित करेगा व अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष से इस विषय में विचार-विमर्श करेगा।
- (iii) जब एक परिवर्तन प्रस्तावित किया जाता है तब अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष उन विगत परिवर्तनों को ध्यान में रखता है जो सदस्य देश की समता दर में पहले किए गए हैं। प्रारम्भिक समता मूल्य के दस प्रतिशत से अधिक परिवर्तन न होने पर कोष कोई आपत्ति प्रकट नहीं करता।

यदि प्रारम्भिक समता मूल्य में पुनः दस प्रतिशत या इससे अधिक परिवर्तन को प्रस्तावित किया जाये तो अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष इस पर विचार करता है व अपनी राय प्रस्ताव के बहतर घण्टे के भीतर व्यक्त कर देता है। इसके अतिरिक्त किसी अन्य दशा में कोष के द्वारा पर्याप्त विचार-विमर्श के उपरान्त राय दी जाती है।

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष सदस्य देशों को काफी अधिक व प्रतिस्पर्द्धी अवमूल्यनों से सुरक्षित रखता है। 1930 के आस-पास विभिन्न देशों द्वारा बार-बार अवमूल्यन किया गया था जिसका विश्व अर्थव्यवस्था पर विपरीत प्रभाव पड़ा, जबकि मुद्रा कोष की नीतियाँ जहां तक सम्भव हो अवमूल्यन को टालने का प्रयास करती है। इसके बावजूद भी यह कठिनाई सामने आती है कि मुद्रा कोष के मसविदे में आधारभूत को स्पष्ट रूप से वर्णित नहीं किया गया है।

भुगतान सन्तुलन समायोजन पर कुछ अर्थशास्त्रियों के विचार महत्वपूर्ण हैं। रागनर नर्से के अनुसार विनिमय की साम्य दर को परिभाषित करने का सबसे सन्तोषजनक तरीका यह है कि इसे ऐसी दर के रूप में परिभाषित किया जाये जो एक निश्चित समय अवधि के भीतर भुगतान सन्तुलन को साम्य में रखे। अतः विनिमय की असन्तुलित दर से तात्पर्य है कि एक देश अपने अन्तर्राष्ट्रीय कोषों में निरन्तर शुद्ध वृद्धि या हास का अनुभव करता है।

बर्नस्टीन ने स्पष्ट किया कि कुल विश्व कोषों में होने वाली वृद्धि में एक देश के शेर या अंश को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए।

फ्लेमिंग के अनुसार- एक देश अपने भुगतान सन्तुलन के खाते में घाटे का अनुभव तब करेगा, जबकि वह काफी अधिक स्तर पर कोषों का अवक्षय या हास कर रहा हो या इन्हें सीमित मात्रा में प्राप्त कर रहा हो।

**आधारभूत असाध्य की समय अवधि:**

अब हम यह स्पष्ट करेंगे कि वह समय अवधि कितनी लम्बी हो जिस पर भुगतान सन्तुलन के असाम्य को आधारभूत कहा जाता है एवं असाम्य का मापन किस प्रकार सम्भव है ?

नक्सों के अनुसार यदि किसी देश का बाह्य खाता, एक दी हुई विनिमय दर पर पाँच या दस वत्तों की समय अवधि में एकसमान शेष या सन्तुलन का प्रदर्शन कर रहा हो तो विनिमय दर को एक सन्तुलित दर माना जाएगा।

यह समय अवधि इतनी लम्बी होनी चाहिए कि एक सम्पूर्ण व्यापार चक्र हेतु पर्याप्त हो। ऐसी दशा में, जबकि चक्रीय गतियाँ बहुत अधिक स्पष्ट न हों तो दो या तीन वर्षों की समय अवधि को सामान्यतः उचित माना जा सकता है।

भुगतान सन्तुलन के असाम्य को एक देश के अन्तर्राष्ट्रीय कोषों में होने वाले शब्द परिवर्तनों द्वारा मापा जा सकता है। इस सन्दर्भ में सभी अल्पकालीन पूंजीगतियाँ (जो कुछ नीतिगत निर्णयों; जैसे बट्टे की दर में होने वाले परिवर्तन के प्रत्युत्तर में होती हैं) ठीक उसी प्रकार कार्य करती हैं जैसे देश के अन्तर्राष्ट्रीय कोष।

ऐसी अल्पकालीन पूंजीगतियाँ जो कुछ असामान्य तत्वों; जैसे राजनीतिक स्थिरता व व्यवधानों के कारण हो रही हो, को सन्तुलन निर्धारित करने वाले प्रमाप से अलग रखा जाता है।

नक्सों ने इस बात पर जोर दिया कि व्यापार एवं भुगतान पर संरक्षण की नीति को लागू करके या घरेलू अवस्फीति की नीति (जिससे अर्द्धबेकारी उत्पन्न हो) द्वारा भुगतान सन्तुलन के असाम्य को दूर नहीं किया जा सकता।

**बर्नस्टीन ने भुगतान सन्तुलन की समस्याओं को तीन भागों में बाँटा है:**

(1) चालू मुद्रा प्रसार।

(2) कीमत एवं लागत असमानता।

(3) संरचनात्मक कुसमायोजन।

एक पूर्ण रोजगार अर्थव्यवस्था में यदि समग्र उत्पादन से अधिक समग्र व्यय हो तो भुगतान सन्तुलन में घाटा उत्पन्न होता है अर्थात् घाटा तब होगा, जबकि देश में साख का अधिक विस्तार किया जा रहा हो जिससे मौद्रिक आय व व्यय में वृद्धि होती है व व्यापार सन्तुलन पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

यह प्रभाव बढ़ते आयातों तथा घटते निर्यातों द्वारा मापा जायेगा। देश की वस्तु व सेवाओं की घरेलू माँग व पूर्ति की लोच जितनी अधिक होगी। व्यापार सन्तुलन में उतना ही अधिक घाटा होगा।

आधारभूत असन्तुलन का आत्मनिष्ठ मापन उस देश के अन्तर्राष्ट्रीय कोषों के व्यवहार द्वारा मापना कठिन नहीं है। यद्यपि असन्तुलन की दशा तब भी विद्यमान हो सकती है जब भुगतान व प्राप्तियाँ सन्तुलन में हों यह तब ही सम्भव होगा जब व्यापार एवं भुगतानों पर प्रतिबन्ध लगा कर या घरेलू अवस्फीति की दशा उत्पन्न कर सन्तुलन प्राप्त किया जा रहा हो।

आधारभूत असन्तुलन विद्यमान रहने पर यह प्रयास करना होगा कि संरक्षणों को हटाया जा सके व घरेलू अर्थव्यवस्था का विस्तार किया जाए। ऐसी दशा में यह देखना भी आवश्यक है कि कहीं भुगतान सन्तुलन में घाटे की प्रवृत्ति बढ तो नहीं रही है। नीति निर्णय से सम्बन्धित प्रसंग तब ही सार्थक बन पाएँगे जब असन्तुलन के सम्पूर्ण स्रोतों की जानकारी जुटा पाना सम्भव बने।

## **भुगतान संतुलन की अवधारणा, घटक और महत्व**

### **भुगतान संतुलन की अवधारणा, घटक और महत्व**

जब किसी देश की अर्थव्यवस्था, विदेशी मुद्रा, नकदी प्रवाह आदि का आकलन किया जाता है, तो बहुत घटकों पर विचार किया जाता है। ऐसा ही एक घटक भुगतान संतुलन है, जो किसी देश की अर्थव्यवस्था के आकलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसलिए इस लेख के माध्यम से हम आपको इसी के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी देने जा रहे हैं।

## भुगतान संतुलन क्या होता है?

भुगतान संतुलन (बैलेंस ऑफ पेमेंट) को एक निश्चित अवधि के भीतर किसी देश के निवासियों तथा अन्य देशों के बीच किए गए सभी मौद्रिक लेनदेन के रिकॉर्ड के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। कंपनियों, व्यक्तियों और सरकार द्वारा किए गए लेन-देन का विवरण भुगतान संतुलन स्टेटमेंट में निहित किया जाता है। ये आधिकारिक रिकॉर्ड होते हैं, जो विशेषकों को फंड के प्रवाह की निगरानी करने और आर्थिक नीतियों का विश्लेषण करने में मदद करते हैं। अर्थव्यवस्था में नकदी के अन्तर्वाह और बहिर्वाह को निर्धारित करने में भुगतान संतुलन महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सरल शब्दों में कहा जाये, तो भुगतान संतुलन किसी देश और अन्य देशों के बीच हुए वित्तीय लेन-देन का हिसाब होता है।

## भुगतान संतुलन का सूत्र

भुगतान संतुलन की गणना निम्न विधि का उपयोग करके की जाती है –

भुगतान संतुलन = चालू खाता शेष + पूंजी खाता शेष + आरक्षित शेष

भुगतान संतुलन (बीओपी) =  $(X-M) + (CI - CO) + \text{फरिक्स}$

यहां,  $X$  निर्यात,  $M$  आयात,  $CI$  पूंजी अन्तर्वाह,  $CO$  पूंजी प्रवाह और फरिक्स का मतलब विदेशी मुद्रा आरक्षित शेष है।

## भुगतान संतुलन का महत्व

भुगतान संतुलन एक महत्वपूर्ण डेटा प्रदान करता है। इसमें किसी अर्थव्यवस्था के भीतर नकदी की आवक और जावक के प्रवाह का रिकॉर्ड रहता है। यह डेटा अर्थव्यवस्था के विकास के लिए फंड के प्रवाह की निगरानी में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भुगतान संतुलन किसी अर्थव्यवस्था के लिए महत्वपूर्ण क्यों है, इसके कई कारण हैं, जिनमें से कुछ निम्न हैं –

- यह देश की वित्तीय और आर्थिक स्थिति की तस्वीर देता है। इसका उपयोग विभिन्न देशों के आर्थिक संबंधों को समझने के लिए किया जाता है। इसी कारण इसे अंतरराष्ट्रीय वित्तीय प्रबंधन का एक महत्वपूर्ण हिस्सा माना जाता है।
- भुगतान संतुलन को त्रैमासिक आधार पर स्टेटमेंट के रूप में जारी किया जाता है। इन स्टेटमेंट्स का उपयोग मुद्रा के प्रदर्शन को निर्धारित करने के लिए किया जाता है। इसके साथ ही इससे पता चलता है कि मुद्रा का अवमूल्यन हुआ है, बढ़ी है या स्थिर है। इस प्रकार भुगतान संतुलन से पता चलता है कि अन्य मुद्राओं की तुलना में किसी देश की मुद्रा कैसा प्रदर्शन कर रही है।
- सरकार आर्थिक रुझानों को समझने और कुशल राजकोषीय और व्यापार नीतियों को विकसित करने के लिए भुगतान संतुलन स्टेटमेंट्स का उपयोग करती है।
- अर्थशास्त्री और विश्लेषक इस जानकारी का उपयोग विदेशी राष्ट्रों के साथ देश के आर्थिक व्यवहार को समझने के लिए करते हैं। यह उन मामलों में उचित कदम उठाने में मदद करता है जिनसे देश की अर्थव्यवस्था को नुकसान होने की संभावना रहती है या जो नुकसान पहुंचा रहे होते हैं।
- इसके साथ ही भुगतान संतुलन अच्छे आर्थिक साझेदार के रूप में किसी देश की क्षमता का मूल्यांकन करने में मदद करता है। यह किसी देश द्वारा अंतरराष्ट्रीय आर्थिक विकास में किये गये योगदान को भी इंगित करता है।

## भुगतान संतुलन के प्रकार

भुगतान संतुलन “निर्यात — आयात” के बीच के अंतर को संदर्भित करता है। भुगतान संतुलन की गणना करते समय व्यापार संतुलन को एक महत्वपूर्ण हिस्से के रूप में शामिल करना होता है। भुगतान संतुलन को दो श्रेणियों में विभाजित किया गया है, जो इस प्रकार हैं —

### अनुकूल भुगतान संतुलन

अनुकूल भुगतान संतुलन एक ऐसा परिदृश्य होता है, जिसमें निर्यात की जाने वाली कुल वस्तुओं और सेवाओं का मूल्य, आयात की गई कुल वस्तुएं और सेवाएं के मूल्य से अधिक होता है। इस स्थिति को देश के लिए अच्छा माना जाता है।

### प्रतिकूल भुगतान संतुलन

जब किसी देश में आयतित कुल सेवाओं और वस्तुओं का मूल्य निर्यात की जाने वाली कुल सेवाओं और वस्तुओं के मूल्य से अधिक होता है, तो इसे प्रतिकूल भुगतान संतुलन कहा जाता है। इसे देश के अर्थव्यवस्था के लिए ठीक नहीं माना जाता है।

### भुगतान संतुलन के घटक

भुगतान संतुलन के तीन घटकों की जानकारी नीचे दी गई है। एक आदर्श अर्थव्यवस्था में वित्तीय और पूंजी खातों की राशि को संतुलित करने के लिए चालू खाते की आवश्यकता होती है। हालांकि ज्यादातर मामलों में ऐसा नहीं होता है। भुगतान संतुलन फंड की कमी या अधिशेष को दर्शाता है।

### चालू खाता

चालू खाता वस्तु और सेवा के व्यापार से हुए धन के अन्तर्वाह और बहिर्वाह को रिकॉर्ड और मॉनिटर करता है। इस तरह के खातों में पर्यटन और सेवा क्षेत्र से राजस्व, वस्तुओं के निर्माण, कच्चे माल की दुलाई आदि में खर्च किए गए और प्राप्त होने वाले फंड का रिकॉर्ड रखा जाता है। स्टॉक और रॉयल्टी से उत्पन्न राजस्व और कॉपीराइट भी चालू खाते के तहत दर्ज किए जाते हैं।

### पूंजी खाता

देश का पूंजी खाता अंतर्राष्ट्रीय पूंजी लेन-देन से हुए नकदी प्रवाह का रिकॉर्ड रखता है और इसकी निगरानी करता है। ये वे लेनदेन होते हैं, जो गैर-वित्तीय और गैर-उत्पादित परिसंपत्तियों की खरीद या निपटान के माध्यम से होते हैं। उपहार और ऋण माफ होने से प्राप्त पैसे को भी पूंजी खाते में दर्ज किया जाता है।

### वित्तीय खाता

वित्तीय खाते के तहत व्यवसायों, रियल एस्टेट, शेयरों, सोने और सरकारी स्वामित्व वाली परिसंपत्तियों से होने वाले फंड के प्रवाह की निगरानी की जाती है। वित्तीय खाता भारत में विदेशी नागरिकों के स्वामित्व वाली संपत्ति, विदेशी निवेश और विदेश में भारतीय नागरिकों के स्वामित्व वाली संपत्ति का रिकॉर्ड भी रखता है।

## मुक्त व्यापार और निर्यात संवर्धन

मुक्त व्यापार और निर्यात संवर्धन के लिए भारत के प्रयास | India's Efforts for Free Trade and Export Promotion in Hindi.

आज वैश्वीकरण का दौर चल रहा है। विश्व की अर्थव्यवस्था विश्व व्यापार संगठन के माध्यम से एक दूसरे से सबद्ध हो चुकी है। विश्व व्यापार संगठन (W.T.O.) में भारतीय भागीदारी के साथ ही भारत भी इसमें शामिल हो गया है। सम्पूर्ण विश्व अर्थव्यवस्था अब एक-दूसरे से सम्बद्ध हो रही है।

विश्व व्यापार संगठन ने मुक्त-व्यापार का पक्ष लिया है, जिसमें सभी भागीदार देशों को आर्थिक लाभ मिलते हैं। यह लाभ तभी संभव है जब देश में निर्यात संवर्द्धन हेतु प्रयास किए जाएँ। अतः प्रत्येक देश अपने उत्पादों के विशेषीकरण व निर्यात संवर्द्धन के प्रयास कर रहे हैं, ताकि व्यापार संतुलन पक्ष में रखा जा सके। इस हेतु भारत में निम्न प्रयास किए गए हैं।

### **मुक्त व्यापार क्षेत्र (F.T.A.):**

ये विशेष रूप से तैयार किए गए ऐसे क्षेत्र हैं, जहाँ उत्पादों का प्रसंस्करण तथा उनका पारगमन करें व विभिन्न शुल्कों एवं सुनिश्चित नियमों के बिना किया जा सकता है। स्वतंत्र बन्दरगाहों को भी समान दर्जा दिया गया है।

इस प्रकार इन्हें रोजगार, स्वास्थ्य, सुरक्षा एवं विकास नियोजन के सम्बंध में देश के शेष भागों में लागू कानून से छूट प्रदान की जाती है। तात्पर्य यह है कि मुक्त व्यापार क्षेत्र, देश की सीमा शुल्क प्रदेश से बाहर माने जाते हैं। पनवेल (मुंबई) में अर्शिया इंटरनेशनल ने देश का 'पहला फ्री ट्रेड एंड वेयरहाउसिंग जोन' अगस्त, 2010 शुरू किया।

### **निर्यात संवर्द्धन क्षेत्र (E.P.Z.):**

980 के दशक से ही भारत में निर्यात संवर्द्धन क्षेत्रों (ईपीजेड) का विकास हुआ है। ये घरेलू प्रशुल्क क्षेत्र से अलग विशिष्ट परिसरों के रूप में स्थापित किए गए हैं जो अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिस्पर्द्धी एवं शुल्क मुक्त वातावरण उपलब्ध कराते हैं।

यहाँ पर लागत को निम्न रखने का प्रयास किया जाता है तथा उच्च गुणवत्ता वाले प्रतिस्पर्द्धी व श्रेष्ठ उत्पाद तैयार किए जाते हैं, ताकि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हम लाभ की स्थिति में रहें। 1980 के दशक के प्रारंभ से ही हम इस दिशा में प्रयासरत हैं।

कांडला (गुजरात), नोएडा (उत्तर प्रदेश), फाल्टा (पश्चिम बंगाल), सांताक्रुज (मुम्बई), कोच्चि (केरल), चेन्नई (तमिलनाडु) व विशाखापत्तनम (आंध्र प्रदेश) भारत के कुछ प्रमुख निर्यात प्रसंस्करण क्षेत्र हैं। सान्ताक्रुज-इलेक्ट्रॉनिक वस्तुएँ, रत्न व आभूषण का निर्यात करता है। इसी प्रकार तिरुनेलवेली (सूती वस्त्र), कांचीपुरम (रेशम), सूरत (वस्त्र व आभूषण) आदि का निर्यात करते हैं।

वस्तुतः निर्यात प्रसंस्करण क्षेत्रों में इलेक्ट्रॉनिक्स, इंजीनियरिंग, रसायन-उत्पाद, आभूषण, वस्त्र, रबड़ व प्लास्टिक उत्पादों के निर्यात पर ध्यान दिया जाता है। इन निर्यात प्रसंस्करण क्षेत्रों के अलावा निर्यातानुमुखी इकाइयों पर भी ध्यान दिया गया है, जो कपड़ा, खाद्य-प्रसंस्करण, ग्रेनाइट स्लैब, इलेक्ट्रॉनिक्स व खनिजों का निर्यात भी करते हैं।

इन निर्यात संवर्द्धन क्षेत्रों में बेहतर आधारभूत संरचना, भूमि, जल व ऊर्जा आपूर्ति एवं बिना किसी अतिरिक्त वसूली के सीमा-शुल्क सम्बंधी औपचारिकताएँ पूरी कराई जाती हैं। वर्तमान समय में निजी क्षेत्रों को इस क्षेत्र में विशेष प्रोत्साहन दिया गया है।

सूरत, मुम्बई, ग्रेटर नोएडा, कांचीपुरम, नानगुनेरी (तमिलनाडु), पोसित्रा (गुजरात), कालपी (पश्चिम बंगाल), पारादीप (ओडिशा), भदोही (उत्तर प्रदेश), काकीनाडा (आंध्र प्रदेश), द्रोणगिरी (महाराष्ट्र) इसके उदाहरण हैं। इनमें निजी निवेशकों के साथ-साथ अनिवासी भारतीयों को भी प्रोत्साहन दिया गया है।

### **विशेष आर्थिक क्षेत्र (S.E.Z.):**

वैश्वीकरण, उदारिकरण व निजीकरण (LPG) के दौर में निर्यात संवर्द्धन क्षेत्रों (ईपीजेड) को चीनी मॉडल का अनुसरण करते हुए विशेष आर्थिक क्षेत्र (एसईजेड) का दर्जा दिया जा रहा है। भारत ने चीन की तर्ज पर विशेष आर्थिक क्षेत्रों को द्वितीय औद्योगिकीकरण का आधार बनाना चाहा है।

इसके लिए नए-नए क्षेत्रों में संभावनाएँ ढूँढी जा रही हैं तथा अब तक इससे सम्बंधित 580 से भी अधिक प्रस्तावों को औपचारिक अनुमति दी गई है।

विशेष आर्थिक क्षेत्र देश की भौगोलिक सीमा के अन्दर स्थित ऐसा 'शुल्क मुक्त' (Duty Free) क्षेत्र है, जिसे व्यापार संचालन, शुल्क एवं प्रशुल्कों की दृष्टि से विदेशी क्षेत्रों के समान माना जाता है, जो सामान्य रूप से निवेशकों को आकर्षित करने के लिए उदार आर्थिक नीतियों एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर के आधारभूत सुविधाओं एवं आवश्यकताओं से सम्पन्न होता है।

चीन ने 1978, में प्रथम विशेष आर्थिक क्षेत्र का विकास किया था जिसके तर्ज पर भारत सरकार द्वारा अप्रैल, 2000 में विशेष आर्थिक क्षेत्र (सेज) नीति की घोषणा की गई, जिसमें विशेष आर्थिक क्षेत्रों को विकास का ईंजन बनाना प्रमुख लक्ष्य रखा गया। इसमें विश्व स्तरीय आधारभूत संरचना के विकास, नियम व प्रतिबंधों की कमी, बेहतर राजकोषीय सुविधाएँ आदि का प्रावधान किया गया।

सभी निर्यात संवर्द्धन क्षेत्रों को विशेष आर्थिक क्षेत्रों में बदल दिया गया। सेज नीति को प्रभावी बनाने के लिए इससे सम्बंधित अधिनियम फरवरी, 2006 में लागू हो गया है। त्वरित निर्णय हेतु 'सिंगल विन्डो क्लियरेंस' की व्यवस्था की गई है।

यह माना गया कि सेज से देश से नवीन आर्थिक गतिविधियों का सृजन होगा, जिससे बड़े पैमाने पर रोजगार के अवसरों को उपलब्ध कराना संभव होगा। देश में नए निवेशों को बढ़ावा मिलेगा, विदेशी भागीदारी बढ़ेगी, वस्तु व सेवाओं के निर्यात को प्रोत्साहन मिलेगा। इस प्रकार, देश विकसित बनने की प्रक्रिया में आगे बढ़ता चला जाएगा।

विशेष आर्थिक क्षेत्र से सम्बंधित नीति में औद्योगिक विकास व निर्यात संवर्द्धन में तालमेल बैठाने के प्रयास हो रहे हैं। इसमें सेज के विकासकर्ता व निगमों के हितों पर ध्यान देने के साथ-साथ प्रतिस्पर्द्धी अर्थव्यवस्था के विकास हेतु हरसंभव प्रयास किए जा रहे हैं।

विशेष आर्थिक क्षेत्र के लिए भूमि के एक बड़ी मात्रा उपलब्ध कराई जाती है, ताकि क्षेत्र विशेष में बड़े पैमाने पर औद्योगिकीकरण को बढ़ावा मिल सके एवं हमारे उत्पाद विश्व के बाजारों में अधिक प्रतिस्पर्द्धी हो सके।

इससे भारत के विभिन्न हिस्सों में जहाँ एक ओर वृहद स्तर पर रोजगार के अवसरों को उत्पन्न किया जा सकेगा, वहीं दूसरी ओर औद्योगिकीकरण की इस प्रक्रिया से हम विकसित देश बनने की ओर अग्रसर हो सकेंगे।

वर्तमान समय में विशेष आर्थिक क्षेत्रों के लिए स्वीकृत किए गए क्षेत्रों की सर्वाधिक संख्या महाराष्ट्र में हैं। उसके बाद क्रमशः आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक, गुजरात व हरियाणा का स्थान आता है। राजस्थान, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश व बिहार जैसे राज्यों में विशेष आर्थिक क्षेत्रों के विकास की दिशा में प्रगति संतोषजनक नहीं है।

हाल ही में प. बंगाल में सिंगूर व नंदीग्राम में सेज के विवादग्रस्त होने से इसके बारे में एक बहस छिड़ गई है। जहाँ सिंगूर में टाटा का नैनो कार बनना था, वहीं नंदीग्राम में इंडोनेशिया के सलेम ग्रुप द्वारा केमिकल प्लांट लगाने की योजना थी। परंतु कृषि भूमि अधिग्रहण के मसले को लेकर यहाँ सेज काफी विवादग्रस्त हो गया।

भारत के कुछ प्रमुख विशेष आर्थिक क्षेत्र (सेज) फाल्टा (पश्चिम बंगाल), नोएडा (उत्तर प्रदेश), कांडला व सूरत (गुजरात), सांताक्रुज (मुंबई), कोच्चि (केरल), चेन्नई (तमिलनाडु), विशाखापत्तनम् (आंध्र प्रदेश), दिब्बीज लेबोरेटरी (आंध्र प्रदेश), हैदराबाद जेम्स लिमिटेड, महिंद्रा वर्ल्ड सिटी (महाराष्ट्र), कोल्लम टेम्पोपार्क (केरल), नोकिया व फ्लैक्ट्रॉनिक्स सेज (तमिलनाडु), विप्रो लिमिटेड व बाइफोन लिमिटेड (कर्नाटक), क्वार्क सिटी (चंडीगढ़), मूंदड़ा बंदरगाह सेज (गुजरात), रिलायंस जामनगर इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड (गुजरात), सेरम बायोफार्मा लिमिटेड व एअरपोर्ट डेवलपमेन्ट कॉरपोरेशन लिमिटेड (महाराष्ट्र), राजीव गांधी प्रौद्योगिकी उद्यान एवं मोटोरोला, डेल व फॉक्सकॉन और अपाचे (आंध्र प्रदेश), सेज आदि हैं।

नेल्लौर (आंध्र प्रदेश) में उर्वरक सहकारी कंपनी द्वारा देश का पहला किसान विशेष आर्थिक क्षेत्र (सेज) की स्थापना किए जाने की योजना है। हाडापसर (पुणे) में पहला 'बायोटेक विशेष आर्थिक क्षेत्र' निर्मित हो रहा है। हरियाणा के फरीदाबाद में देश का पहला 'ग्रीन एसईजेड' बनाया जा रहा है।

यद्यपि विशेष आर्थिक क्षेत्रों को भारतीय औद्योगिक व आर्थिक विकास का इंजन माना जाता है, परंतु सरकारी स्तर पर इसके ठीक से संचालन न होने की वजह से यह अनेक राजनीतिक व आर्थिक विवादों में घिर गया है। इस संदर्भ में सिंगूर व नंदीग्राम का उदाहरण लिया जा सकता है, जहाँ हिंसात्मक घटनाएं भी हुईं तथा भूमि अधिग्रहण की समस्या ने राजनीतिक रंग ले लिया।

वस्तुतः विशेष आर्थिक क्षेत्र से जुड़ी सबसे गंभीर समस्या भूमि अधिग्रहण से ही सम्बंधित है। वर्तमान समय में सेज के लिए भूमि की अधिकतम सीमा 5,000 हेक्टेयर की है। इसे भारत सरकार ने बहुउत्पादीय विशेष आर्थिक क्षेत्र के लिए 10,000 हेक्टेयर किए जाने पर विचार किया जा रहा है।

यद्यपि यह प्रावधान है, कि सेज स्थापित करने वाली इकाई बाजार दर पर किसानों से भूमि खरीद सकती है, परंतु राजनीतिक हस्तक्षेप के कारण भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया बहस का मुद्दा बन गई है।

भारत में संस्थागत कारक विशेषकर भूमि सुधार के पहलू इस संदर्भ में विवाद के कारण हैं। उदाहरण के लिए, पश्चिम बंगाल में जमींदारी बंदोबस्त रहा है, जहाँ भू-स्वामी व काश्तकार (किसान) अलग-अलग हैं।

टाटा प्रबंधन ने भूमि अधिग्रहण हेतु मुआवजा भू-स्वामियों को दिया। इसमें पंजीकृत व अपंजीकृत बंटाईदार (काश्तकार) व खेतीहर मजदूरों के हितों का ध्यान नहीं रखा गया, इसीलिए वहाँ गंभीर समस्या उत्पन्न हो गई। अतः मुआवजा देने के क्रम में वास्तविक किसानों के हितों को ध्यान में रखा जाना भी जरूरी है।

पर्याप्त मुआवजा, विस्थापितों के पुनर्वास व पुनर्सेजगार, विशेष आर्थिक क्षेत्र में स्थापित उपक्रमों में उनकी शेयर होल्डिंग की व्यवस्था, बाजार आधारित प्रतिस्पर्धा आदि उपरोक्त समस्याओं के समाधान हो सकते हैं। इस हेतु भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया को पारदर्शी, स्पष्ट व सकारात्मक बनाया जाना जरूरी है।

विशेष आर्थिक क्षेत्रों के निर्माण के क्रम में यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि कृषि भूमि का यथासंभव कम से कम अधिग्रहण हो अन्यथा देश की बढ़ती जनसंख्या के लिए जरूरी खाद्य सुरक्षा पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकते हैं। कई कंपनियाँ केवल कर रियायतों का लाभ उठाने के लिए अपनी इकाइयों को सेज में स्थानांतरित कर रही है।

इससे बेहतर आधारभूत संरचना क्षेत्र में और विकास बढ़ेगा व क्षेत्रीय असमानताएं बढ़ेंगी। अतः इस प्रवृत्ति को कम किया जाना जरूरी है। भारत ने सेज मामले में चीन की सफलता को दोहराने की कोशिश की है, परंतु चीन में विशेष आर्थिक क्षेत्र (सेज) बड़े शहरों से काफी दूर छोटे कस्बों व गाँव में विकसित किए गए ताकि वहाँ भी आधुनिक सुविधाएं विकसित हो सके तथा विकास का विकेन्द्रीकरण संभव हो सके।

इसके विपरीत भारत में अधिकतर सेज महानगरों के निकट स्थापित हो रहे हैं। स्पष्ट है कि विशेष आर्थिक क्षेत्रों में केवल कर रियायत व श्रम कानून में उदारता लाकर ही सरकार को संतोष नहीं करना चाहिए, वरन् उन्हें भेदभाव से दूर रखकर संपूर्ण विकास का साधन बनाना चाहिए।

इसके लिए स्वस्थ प्रतिस्पर्धा, अभिनव विधियों के प्रयोग एवं अंतर्राष्ट्रीय सहयोग बढ़ाने पर बल देना जरूरी है, ताकि विशेष आर्थिक क्षेत्र बाजार मैत्रीपूर्ण, सुधार-मैत्रीपूर्ण व समग्र विकास में सहायक बनकर उभर सकें। इन्हीं सब प्रयासों से सेज चीन की भांति भारत के भी आर्थिक विकास का उत्प्रेरक हो सकेगा तथा देश के औद्योगीकरण की प्रक्रिया को बढ़ावा देगा, जिससे हम 21वीं सदी में विकसित देश बनने का गौरव हासिल कर सकेंगे।

**कृषि निर्यात क्षेत्र (A.E.Z.):**



विशेष आर्थिक क्षेत्र व निर्यात प्रसंस्करण क्षेत्र के अलावा कृषि उत्पादों से सम्बंधित कृषि निर्यात क्षेत्र (A.E.Z.) भी बनाए जा रहे हैं। कृषि निर्यात क्षेत्र किसी देश का वह विशेषीकृत भौगोलिक क्षेत्र होता है, जो कृषि और उससे सम्बद्ध उद्योगों को बढ़ावा देने के लिए स्थापित किया जाता है ताकि वहाँ के कृषकों को वैश्वीकरण का लाभ मिल सके। ताइवान के कुल निर्यात का 6% एईजेड से ही प्राप्त होता है।

भारत में और भी बेहतर संभावनाएँ हैं। इस संदर्भ में तिरुचरापल्ली में फूलों की खेती, उत्तराखंड का अल्मोड़ा व दून घाटी में लीची के लिए, मध्यवर्ती उत्तर प्रदेश आम के बगीचे, पंजाब में आलू व जालंधर, लुधियाना आदि क्षेत्रों में कृषि आर्थिक क्षेत्र बनाए गए।

पश्चिम बंगाल में अनानास की खेती हेतु कूच-बिहार व सिलीगुड़ी, पंजाब में सब्जी की खेती, महाराष्ट्र में अंगूर (नागपुर, नासिक) की खेती, के विकास हेतु प्रयास हुए हैं। कृषि आधारित पदार्थों के निर्यात की पर्याप्त संभावनाएँ हैं।

बागानी कृषि के विकास एवं उत्पादों के निर्यात के द्वारा भारतीय ग्रामीण अर्थव्यवस्था में गत्यात्मक परिवर्तन लाए जा सकते हैं तथा वैश्वीकरण के लाभ को अधिक समानता से वितरित किया जा सकता है।

देश में कृषि निर्यात क्षेत्रों (A.E.Z.) को विशेष आर्थिक क्षेत्र (S.E.Z.) के फेर में बिल्कुल अनदेखा किया जा रहा है, जबकि कृषि निर्यात क्षेत्र के शानदार प्रदर्शन को देखते हुए विशेषज्ञ इसमें किए गए निवेश को विशेष आर्थिक क्षेत्र से ज्यादा फायदेमंद और विकास की कुंजी बता रहे हैं।

परंतु पिछले 5 वर्षों में बीस राज्यों में कुल मिलाकर 60 ही कृषि निर्यात क्षेत्र बनाए गए हैं, जबकि इसकी योजना 2001 में ही बन गई थी। आज विशेष आर्थिक क्षेत्र को विकास का इंजन माना जा रहा है तथा इससे सम्बंधित परियोजनाएँ लगभग 500 हैं।

लेकिन, विशेषज्ञों की शिकायत यह है कि कृषि को प्राथमिकता दिए जाने के बावजूद कृषि निर्यात क्षेत्र उपेक्षित हो रहे हैं तथा इनमें अपेक्षा से आधा निवेश भी नहीं हुआ है, जो भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए शुभ संकेत नहीं है।

मुक्त व्यापार की स्थिति में निर्यात संवर्द्धन के विविध प्रयास आज के वैश्वीकरण के दौर में भारतीय व्यापार संतुलन हेतु अपरिहार्य हैं। अतः इनके आधुनिकीकरण एवं विभिन्न प्रकार से इन्हें प्रोत्साहन दिए जाने की आवश्यकता है, ताकि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हम अधिक प्रतिस्पर्द्धी हो सकें।

## आयात नीति

**प्रस्तावना:** - किसी भी देश के लिए यह एक आदर्श स्थिति जब होती है तब वह अधिकांश कमोडिटीज और दूसरी जरूरत की चीजों के लिए आयात पर निर्भर न हो। विशेषकर खाद्यान्न उत्पादन में। पर हकीकत में आत्मनिर्भरता का यह लक्ष्य हासिल करना बेहद चुनौतीपूर्ण होता है। बंपर पैदावार होने के बावजूद देश में खाद्यान्न भंडारण की समुचित व्यवस्था नहीं होने से एक ओर जहां अनाज सड़ता है वहीं आयात को मजबूर होना पड़ता है। भूमंडलीकरण का दबाव भी देशों को अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए अपनी सीमाएं खोलने के लिए बाध्य कर रहा है। ऐसे में हम कितने आत्म निर्भर रह गए है यह कहना उचित नहीं है। कहने को हमारा देश कृषि प्रधान देश है पर आयात होने पर इस देश में खाद्यान्न कमी हमेशा से होती रही है।

**खाद्यान्न सुरक्षा:** - विश्व व्यापार संगठन में जो सौदेबाजी चल रही है उसके अनुसार भारत और चीन के नेतृत्व में जी-33 देशों का समूह अपनी खाद्य सुरक्षा जरूरतों के लिए खाद्यान्न के भंडारण और उसके लिए उचित सब्सिडी चाहते हैं। वे चाहते है कि इस सब्सिडी को 'ग्रीन बाक्स' श्रेणी में रखा

जाए। अमरीका जैसे देशों को इस पर आपत्ति है कि भारत का कृषि क्षेत्र कई विदेशी उत्पादों के लिए बंद है। उसके अनुसार भारत जैसे देश एक मनमानी टैरिफ नीति पर चल रहे हैं।

**कृषि उत्पादन:** - बेहतर नीति तो यही है कि कृषि उत्पादन में हमारी निर्भरता कम हो। सरकारें लंबे समय से इस दिशा में प्रयास करती आ रही हैं। लेकिन इस लक्ष्य को हासिल करना मुश्किल से मुश्किल होता जा रहा है। विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) में जो बातचीत हो रही है, उसमें भारत के ऊपर के बहुत अधिक दबाव है कि भारत आयात के ऊपर टैरिफ और ड्यूटी हटाए तथा तमाम कमोडिटीज के लिए बाजार खोल दे। भारत को इस दबाव के सामने अपना बाजार एक सीमा तक खोलना ही पड़ेगा। जो बातचीत हो रही है उससे तो यही संकेत मिल रहे हैं। इसलिए आगे आने वाले दिनों में संभावना तो यही है कि भारत का आयात कृषि क्षेत्र में और बढ़ेगा। अगर भारत को कृषि क्षेत्र में अपनी निर्भरता कम करना है तो उसे कुछ निश्चित प्रयास करने होंगे। भारत लंबे समय से इस दिशा में प्रयास करता आ रहा है पर उसे सफलता नहीं मिली है।

**बाजार प्रणाली:** - सबसे पहली बात यह है कि भारत को अपना कृषि उत्पादन बढ़ाना होगा। सरकारें आयात का सहारा तब लेती हैं जब किसी जिंस या अनाज के दाम कम आपूर्ति के कारण बढ़ते हैं। ऐसे में लोगों की अपेक्षा यह होती है कि उन्हें सस्ती चीज उपलब्ध कराई जाए। कैसे और कहां से, इससे लोगों को मतलब नहीं होता। ऐसे में सरकारें महंगाई पर काबू पाने के लिए संबंधित जिंस के आयात का मार्ग अपनाती हैं। हमारी कृषि में मानसून पर निर्भरता को देखते हुए किसी वर्ष कम उत्पादन की आशंका को देखते हुए आयात की संभावना को नकारा नहीं जा सकता। जहां तक डब्ल्यूटीओ समझौते के कारण आयात बढ़ते की आशंका का सवाल है तो उसको दो तरीके से नियंत्रित किया जा सकता है।

पहला तो हमें अपने कृषि उत्पादन की तकनीक सुधारनी होगी। कृषि तकनीक को सुधारे बिना हम प्रतिस्पर्धी दाम पर अपना उत्पादन नहीं बढ़ा सकते और सस्ते आयात की समस्या से निपटना संभव नहीं होगा।

दूसरा बाजार प्रणाली को चुस्त करना होगा। इसमें प्रमुख समस्याएं हैं- लॉजिस्टिक, भंडारण तथा एकाधिकार है।

**प्रयास:** - पिछले दिनों हमने प्याज का आयात देखा। दाल भी एक अन्य जिंस है जिसका आयात बढ़ रहा है। इनका आयात और दाम बढ़ने के पीछे वजह है कम उत्पादन और बाजार प्रबंधन में खामियां। कई बार बाजार के माध्यम से दाम स्थिर करने के प्रयास में सफलता नहीं मिलती। प्याज के दाम बढ़ने के पीछे बड़ी वजह यही है। दालों के दाम भारत में इसलिए बढ़ रहे हैं क्योंकि भारत में दालों का उत्पादन मांग के अनुसार नहीं बढ़ पा रहा है। ऐसे देश भी बहुत कम हैं जहां से दालों का पर्याप्त आयात कर मांग की पूर्ति की जा सके। लेकिन इस बार माना जा रहा कि दालों की फसल बेहतर हुई है। जमाखोरों से भी कुछ माल बाहर आएगा। इसलिए अक्टूबर-नवम्बर तक दालों के दाम गिरना शुरू हो जाएंगे। पर भारत का डब्ल्यूटीओ में पूरी कोशिश करनी होगी कि अधिक जिंसों के लिए भारत का बाजार न खोलना पड़े।

**खाद्यान्न आयात बढ़ा:** - पिछले पचास सालों में वैश्विक स्तर पर खाद्यान्न का आयात पांच गुना से भी ज्यादा बढ़ा है। 1961 में लगभग 50 मिलियन टन खाद्यान्न का आयात वैश्विक स्तर पर हुआ करता था, जबकि 2013 में यह आयात 300 मिलियन टन हो चुका था। दुनिया भर के देश अपनी जरूरतों के लिए अंतरराष्ट्रीय बाजार पर अत्यधिक निर्भर होते जा रहे हैं। लेकिन इसका दुष्परिणाम यह होता है कि अगर किसी कमोडिटी के दाम अचानक से बढ़ते हैं तो फिर आयात पर निर्भर देश के लिए बड़ा संकट खड़ा हो जाता है।